क्षमापना महापर्व

18 पापस्थानक की समझ से
स्वयं के संवेदन तक...

Shrimad Rajchandra Mission, Delhi

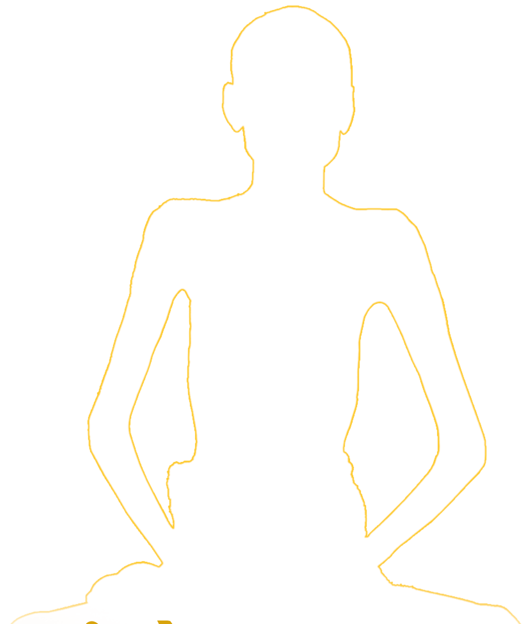

‘क्षमा ही मोक्ष का भव्य द्वार है।’

– श्रीमद् राजचंद्र

Published by:
Shrimad Rajchandra Mission - The Kendra, Delhi

Warning:
All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, without prior written permission from Shrimad Rajchandra Mission - The Kendra, Delhi. In case of any dispute, the jurisdiction will be at Delhi High Court only.

Printed at:
Imprint Books, B-2/34, Atam Vallabh C.G.H.S. Ltd., Sector 13, Rohini, New Delhi- 110085
1st Edition : 2013
2nd Edition : 2014
© Shrimad Rajchandra Mission, Delhi

Shrimad Rajchandra Mission - The Kendra, Delhi

a Spiritual Revolutionary Movement - SRM

क्षमापना महापर्व

बेन श्री रत्ना प्रभु

लीना जैन

खामेमि सव्व जीवा, सव्वे जीवा वि खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ।।

एवमहं आलोइय, णिंदिय गरिहिय दुगंछियं सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं।।

श्री आवश्यक सूत्र
चतुर्थ आवश्यक
पाठ—10, गाथा 1,2

शिक्षापाठ-56
क्षमापना

हे भगवान्! मैं बहुत भूल गया, मैंने आपके अमूल्य वचनों को ध्यान (लक्ष) में लिया नहीं। आपके कहे हुए अनुपम तत्वों का मैंने विचार किया नहीं। आपके प्रणीत किए हुए उत्तम शील का सेवन किया नहीं। आपकी कही हुई दया, शांति, क्षमा और पवित्रता को मैंने पहचाना नहीं। हे भगवन्! मैं भूला, भटका, घूमा–फिरा और अनंत संसार की विडम्बना में पड़ा हूँ। मैं पापी हूँ। मैं बहुत मदोन्मत्त और कर्म रज से मलिन हूँ। हे परमात्मन्! आपके कहे हुए तत्वों के बिना मेरा मोक्ष नहीं। मैं निरंतर प्रपंच में पड़ा हूँ। अज्ञान से अंध हुआ हूँ, मुझमें विवेकशक्ति नहीं है और मैं मूढ़ हूँ, मैं निराश्रित हूँ, अनाथ हूँ। निरागी परमात्मन्! मैं अब आपकी, आपके धर्म की और आपके मुनियों की शरण लेता हूँ। मेरे अपराधों का क्षय हो कर मैं उन सब पापों से मुक्त होऊं यह मेरी अभिलाषा है। पूर्वकृत पापों का मैं अब पश्चाताप करता हूँ। ज्यों–ज्यों मैं सूक्ष्म विचार से गहरा उतरता हूँ त्यों–त्यों आपके तत्वों के चमत्कार मेरे स्वरूप का प्रकाश करते हैं। आप निरागी, निर्विकारी, सच्चिदानंदस्वरूप, सहजानंदी, अनंतज्ञानी, अनंतदर्शी और त्रैलोक्य प्रकाशक हैं। मैं मात्र अपने हित के लिए आपकी साक्षी में क्षमा चाहता हूँ। एक पल भी आपके कहे हुए तत्वों की शंका न हो, आपके बताए हुए मार्ग में अहोरात्र मैं रहूं, यही मेरी आकांक्षा और वृत्ति हो। हे सर्वज्ञ भगवान! आपसे मैं विशेष क्या कहूँ? आपसे कुछ अज्ञात नहीं है। मात्र पश्चाताप से मैं कर्मजन्य पाप की क्षमा चाहता हूँ।

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

BEN Sri Ratna PRABHU

क्षमापना महापर्व क्या हैं?

'पर्व'- उसे कहते हैं जो हमारे व्यवहार-संबंधों में पवित्रता बनाए रखे। जैसे रक्षा बंधन, होली आदि।

'महापर्व'- उसे कहते हैं जो सामूहिक रूप से धर्म-पवित्रता को उजागर करे। जैसे पर्यूषण आदि।

'क्षमापना महापर्व'- उसे कहते हैं जिसमें आलोचना पूर्वक हम अपने पाप की क्षमापना करके स्वयं को पवित्र करें। जैसे संवत्सरी दिवस।

क्षमापना महापर्व की आवश्यकता

हमारी आत्मा का स्वरूप अनंत शुद्धता, अनंत शक्ति, अनंत शांति, अनंत ज्ञान, अनंत आनंद, अनंत प्रेम, अनंत सत्य से भरा होने के पश्चात् भी हमें उसका अनुभव नहीं होता। हमारे अनंत गुणों के उपर अनंत पाप का आवरण आ गया है। वीतराग परमात्मा ने मूल तो 18 प्रकार के पाप बताए हैं परंतु जब वह पाप हमारी अनंत चेष्टाओं, मान्यताओं और आचरण से जुड़ते हैं तो अनंत हो जाते हैं। इन्हीं पाप-की-परतों को हटाने के लिए क्षमापना महापर्व का आयोजन किया जाता है। पाप की इन अठारह परतों को "18 पापस्थानक" कहा जाता है।

18 पापस्थानक

1	प्राणातिपात	हिंसा	Voilence
2	मृषावाद	झूठ	Untruth
3	अदत्तादान	चोरी	Theft
4	मैथुन	काम–वासना	Sex Lust
5	परिग्रह	अतिशय संग्रह	Possessiveness
6	क्रोध	गुस्सा	Anger
7	मान	अहंकार	Ego
8	माया	कपट	Deceit
9	लोभ	तृष्णा	Greed
10	राग	चाहत	Attachment
11	द्वेष	घृणा	Hatred
12	कलह	क्लेश	Quarrelling
13	अभ्याख्यान	झूठा कलंक	Accusation
14	पैशुन्य	चुगली करना	Gossip
15	पर–परिवाद	निंदा करना	Criticism
16	रति–अरति	रूचि–अरूचि	Likes & Dislikes
17	माया मृषावाद	कपट पूर्वक झूठ	Malice
18	मिथ्या दर्शन शल्य	विपरीत मान्यता	Wrong Beliefs

क्षमापना महापर्व
का
सम्यक् क्रम

क्षमापना महापर्व के अंतर्गत पाप–की–परत को हटाने के लिए अनिवार्य क्रम इस प्रकार से है–

1. पाप की समझ

हमें समझ में आना चाहिए कि इस प्रकार की मान्यता व आचरण को पाप कहते हैं।

2. पाप की स्मृति

हमें स्मरण में आना चाहिए कि इस पाप की मान्यता व आचरण का सेवन हमने भी किया है।

3. पाप का स्वीकार

हमें स्वीकार होना चाहिए कि इस प्रकार की मान्यता व आचरण ही हमारी आत्मा पर पाप–की–परत चढ़ाता है।

4. पाप की आलोचना

हमारे ही द्वारा चढ़ाई गई इस पाप–की–परत से इस आत्मा के अनंत गुण छिप गए हैं। इसका कारण हम स्वयं ही हैं– इस प्रकार की आत्मिक दृष्टि से पाप की आलोचना करनी चाहिए। आलोचना का अर्थ निंदा नहीं होता अपितु आ+लोचन = आत्मा की ओर से देखना होता है।

5. पाप का पश्चाताप

इतना निर्णय होने के पश्चात् अब उस पाप का खेद, दुख, पश्चाताप होना चाहिए। क्योंकि जिस पाप के बंध का परिणाम कालांतर में दुखरूप आने ही वाला है, उसकी हम अभी पश्चाताप के माध्यम से उदीरणा करते हैं।

6. पाप की क्षमापना

हृदय से पश्चाताप करने के पश्चात् अब उस पाप के लिए मन–ही–मन क्षमा–याचना करनी चाहिए। इस समय हम विशेष ध्यान प्रयोग में उतरेंगे।

7. क्षमापना के पश्चात् संवेदन

हृदय से पश्चाताप और ध्यान प्रयोग विधि के पश्चात् हमारे भीतर एक हल्कापन आ जाता है, राहत होती है, शांति छा जाती है और कभी–कभी तो आनंद बरसता है। इस प्रकार की संवेदना का अनुभव पाप–की–परत के हटने का प्रमाण होता है।

अतः क्षमापना महापर्व का क्रम इस प्रकार होता है–

पाप की समझ

↓

पाप की स्मृति

↓

पाप का स्वीकार

↓

पाप की आलोचना

↓

पाप का पश्चाताप

↓

पाप की क्षमापना (प्रयोग विधि)

↓

आत्मिक संवेदन

1

प्राणातिपात पाप

(हिंसा = Violence)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, स्वार्थवश और प्रमादवश हो कर एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक के जीवों के प्रति प्राणातिपात पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव हिंसा (मान्यता के स्तर पर हिंसा की)

- मुझमें अनंत शुद्धता व स्वतंत्रता होने के बावजूद भी स्वयं को अशुद्ध और पराधीन माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य हिंसा (आचरण के स्तर पर हिंसा की)

- दूसरे जीवों को बंधन में रखा ○
- दूसरे जीवों को मानसिक कष्ट (भय आदि) दिया ○
- दूसरे जीवों को वचन से कष्ट (ताना आदि) दिया ○
- दूसरे जीवों को काया से कष्ट (भूखा रखना आदि) दिया ○
- दूसरे जीवों को मार डाला हो ○
- दूसरे जीवों को उनके अधिकार से वंचित रखा ○
- क्रोध वश किसी जीव के मर जाने की भावना की है ○
- परिस्थिति वश आत्महत्या का विचार ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- हिंसा पाप की समझ ○
- हिंसा पाप की स्मृति ○
- हिंसा पाप की स्वीकृति ○
- हिंसा पाप की आलोचना ○
- हिंसा पाप का पश्चाताप ○
- हिंसा पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव हिंसा से द्रव्य हिंसा तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या प्राणातिपात।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
करी है जीव की हिंसा, किया है अत्याचार
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

2

मृषावाद पाप

(झूठ = Untruth)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश और कषायवश हो कर मृषावाद पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव झूठ (मान्यता के स्तर पर झूठ बोला)

- मेरा स्वरूप 'आत्मारूप' होने के बावजूद भी स्वयं को सदा 'शरीररूप' ही माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य झूठ (आचरण के स्तर पर झूठ बोला)

- क्रोध के कारण झूठ बोला है ○
- मान के कारण झूठ बोला है ○
- माया के कारण झूठ बोला है ○
- लोभ के कारण झूठ बोला है ○
- ऐसा झूठ बोला हो जिसमें संबंध टूट गए हैं ○
- झूठा इल्ज़ाम लगाया है ○
- झूठी गवाही दी है ○
- हड़बड़ाहट में झूठ बोला है ○
- भय के कारण झूठ बोला है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- झूठ पाप की समझ ○
- झूठ पाप की स्मृति ○
- झूठ पाप की स्वीकृति ○
- झूठ पाप की आलोचना ○
- झूठ पाप का पश्चाताप ○
- झूठ पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव झूठ से द्रव्य झूठ तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या मृषावाद।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
कहे हैं झूठ कितने ही, कहा है मृषावाद।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

3

अदत्तादान पाप

(चोरी = Theft)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश और लालच वश हो कर अदत्तादान पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव चोरी (मान्यता के स्तर पर चोरी की)

- मेरा स्वरूप अपने में संपूर्ण होने पर भी पर–वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति को अपने आधीन करना चाहा है। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य चोरी (आचरण के स्तर पर चोरी करी)

- किसी के बिना दिए ही वस्तु रख ली ○
- किसी की ज़मीन–ज़ायदाद हड़प ली ○
- वस्तुओं में मिलावट की ○
- किसी के साथ विश्वासघात किया ○
- दूसरों की ज्ञानपूर्ण बातों को अपने नाम से बताया ○
- रिश्वत दे कर कार्य करवाया ○
- किसी की चोरी की हुई वस्तु स्वयं खरीदी ○
- आयकर (Income Tax) की चोरी की ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- चोरी पाप की समझ ○
- चोरी पाप की स्मृति ○
- चोरी पाप की स्वीकृति ○
- चोरी पाप की आलोचना ○
- चोरी पाप का पश्चाताप ○
- चोरी पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव चोरी से द्रव्य चोरी तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या अदत्तादान।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
कितनी ही चोरी करी, किया है विश्वासघात।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

4

मैथुन पाप

(काम–वासना = Sex Lust)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश और मोहवश हो कर मैथुन पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव कामुकता (मान्यता के स्तर पर कामुक होना)

- मेरा स्वरूप सुख रूप होने पर भी पर स्त्री/पुरूष के साथ काम–भोग से सुख प्राप्ति की मान्यता होना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य कामुकता (आचरण के स्तर पर कामुक होना)

- पर स्त्री/पुरूष के प्रति मन से कामुक हुए ○
- पर स्त्री/पुरूष के साथ वचन से कामुक हुए ○
- पर स्त्री/पुरूष के साथ काया से काम सेवन किया ○
- कल्पना करके काम–सेवन किया ○
- स्व स्त्री/पुरूष के साथ अमर्यादित काम–सेवन किया ○
- दूसरों के विवाह मिलाप कराने में उत्सुक रहें ○
- Internet आदि पर काम–उत्तेजित करने वाली Sites देखी ○
- काम–उत्तेजना बढ़ाने वाली पत्रिकाएँ पढ़ी ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- कामुकता पाप की समझ ○
- कामुकता पाप की स्मृति ○
- कामुकता पाप की स्वीकृति ○
- कामुकता पाप की आलोचना ○
- कामुकता पाप का पश्चाताप ○
- कामुकता पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव कामुकता से द्रव्य कामुकता तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से— किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या मैथुन पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
काम वासना से घिरा, पाप करता अनेक।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

5

परिग्रह पाप

(अतिशय संग्रह = Possessiveness)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, लोभवश और इच्छावश परिग्रह पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव परिग्रह (मान्यता के स्तर पर परिग्रह)

- मेरी आत्मा का स्वरूप है शून्य; तो भी वस्तु आदि के संग्रह से सुख की पूर्णता मानी है। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य परिग्रह (आचरण के स्तर पर परिग्रह)

- आवश्यकता से अधिक भोग सामग्री को इकट्ठा किया है ○
- आवश्यकता से अधिक उपभोग सामग्री को इकट्ठा किया है ○
- भोग सामग्री को इकट्ठा करके उसे भूल जाते हैं (धान्य पदार्थ में कीड़े पड़ जाना) ○
- उपभोग सामग्री को इकट्ठा करके भूल जाते हैं (आवश्यकता पड़ने पर नयी खरीद लेते हैं।) ○
- किसी व्यक्ति के प्रति घृणा आदि को इकट्ठा किया है ○
- किसी व्यक्ति के गुज़र जाने पर भी उसके विचारों से बार–बार स्वयं को दुःखी किया है, इत्यादि..... ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- परिग्रह पाप की समझ ○
- परिग्रह पाप की स्मृति ○
- परिग्रह पाप की स्वीकृति ○
- परिग्रह पाप की आलोचना ○
- परिग्रह पाप का पश्चाताप ○
- परिग्रह पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेष)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव परिग्रह से द्रव्य परिग्रह तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या परिग्रह पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
किया परिग्रह कितना ही, मूर्च्छा अपरंपार।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

6

क्रोध पाप

(गुस्सा = Anger)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, आदतवश और अहंकारवश दूसरों पर गुस्सा करके क्रोध पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव क्रोध (मान्यता के स्तर पर क्रोध)

- मेरी आत्मा की अनंत क्षमा ही पूर्ण सुखरूप है– ऐसा नहीं माना और क्रोध में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य क्रोध (आचरण के स्तर पर किया गया गुस्सा)

- आदतवश गुस्सा किया है ○
- अधिकार जमाने के लिए गुस्सा किया है ○
- परिस्थिति से प्रभावित होकर गुस्सा किया है ○
- अपने को सही साबित करने हेतु गुस्सा किया है ○
- एक का गुस्सा दूसरे पर निकाला है ○
- बहस करते–करते क्रोधित हुए हैं ○
- किसी को बारम्बार समझाने पर भी यदि वह नहीं समझे तो गुस्सा आ गया ○
- गुस्से के आधीन होकर अपशब्द कहे हैं ○
- गुस्से के आधीन होकर किसी की काया, वस्तु को चोट पहुँचाई है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- क्रोध पाप की समझ ◯
- क्रोध पाप की स्मृति ◯
- क्रोध पाप की स्वीकृति ◯
- क्रोध पाप की आलोचना ◯
- क्रोध पाप का पश्चाताप ◯
- क्रोध पाप की क्षमापना ◯ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ◯

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव क्रोध से द्रव्य क्रोध तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ◯

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ◯

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या क्रोध पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
क्रोध मेरे जीवन की, आदत बनता जाए।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् पाए।।२।।

7

मान पाप

(अहंकार = Ego)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश विविध प्रकार से अहंकार करके मान पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव मान (मान्यता के स्तर पर अहंकार होना)

- मेरी आत्मा की अनंत निर्मलता ही सुख रूप है ऐसा नहीं माना और मान में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य मान (आचरण के स्तर पर अहंकार होना)

- अपने ऊँचे कुल का मान किया है ○
- अपनी ऊँची जाति का मान किया है ○
- धन–ऐश्वर्य का मान किया है ○
- अपनी सुंदरता का मान किया है ○
- अपनी तपस्या का मान किया है ○
- अपने दान का मान किया है ○
- अपनी विद्या का मान किया है ○
- अपनी शक्ति का मान किया है ○
- अपनी प्रशंसा की चाहत की है ○
- अपने नाम का मान किया है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- मान पाप की समझ ○
- मान पाप की स्मृति ○
- मान पाप की स्वीकृति ○
- मान पाप की आलोचना ○
- मान पाप का पश्चाताप ○
- मान पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव मान से द्रव्य मान तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या मान कषाय।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
पुण्य से जो भी मिला, करता उसका मान।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् पाए।।२।।

8

माया पाप

(कपट = Deceit)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश और विपरीत बुद्धि के कारण माया पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव माया (मान्यता के स्तर पर कपट करना)

- मेरी आत्मा की अनंत सरलता ही सुखरूप है ऐसा नहीं माना और माया में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य माया (आचरण के स्तर पर कपट करना)

- जैसा सोचा वैसा बोला नहीं ○
- जैसा बोला वैसा किया नहीं ○
- जैसा किया वैसा बताया नहीं ○
- क्रोध के कारण चालाकी की ○
- मान पाने के लिए चालाकी की ○
- लोभ के कारण चालाकी की ○
- लोगों में अच्छा दिखने के लिए कपटपूर्ण व्यवहार किया ○
- ऊपर से मीठा–मीठा बोलकर दूसरे के अंदर से बात उगलवा लेना ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- माया पाप की समझ ○
- माया पाप की स्मृति ○
- माया पाप की स्वीकृति ○
- माया पाप की आलोचना ○
- माया पाप का पश्चाताप ○
- माया पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव माया से द्रव्य माया तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या माया कषाय।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
चाल चली, माया करी, किया कपट अपराध।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

9

लोभ पाप

(तृष्णा = Greed)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश इच्छा के आधीन होकर लोभ पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव लोभ (मान्यता के स्तर पर लोभ करना)

- मेरी आत्मा में रहा अनंत संतोष ही सुख रूप है ऐसा नहीं माना और लोभ में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य लोभ (आचरण के स्तर पर लोभ करना)

- अपने पुण्योदय से अधिक की इच्छा की है ○
- अपने पापोदय से कम की इच्छा की है ○
- अपनी बाह्य पात्रता से अधिक की इच्छा की है ○
- अपनी अंतर पात्रता से अधिक की इच्छा की है ○
- भविष्य की चिंता के कारण लोभवश धर्म स्थानकों में दान नहीं दिया है ○
- लोभवृत्ति के कारण अपने पर आश्रित लोगों की धन, वस्त्र, भोजन आदि से मदद नहीं की है ○
- शारीरिक स्वस्थता के लोभ से तपस्या नहीं की है ○
- दूसरों को अच्छा दिखूँ इस लोभ से धर्म क्रियाएँ छोड़ी हैं ○
- दूसरों को अच्छा दिखूँ इस लोभ से धर्म क्रियाएँ की हैं ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना–क्रम में गहरे उतरते हैं–

- लोभ पाप की समझ ◯
- लोभ पाप की स्मृति ◯
- लोभ पाप की स्वीकृति ◯
- लोभ पाप की आलोचना ◯
- लोभ पाप का पश्चाताप ◯
- लोभ पाप की क्षमापना ◯ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ◯

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव लोभ से द्रव्य लोभ तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ◯

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों.... ◯

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या लोभ कषाय।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
इच्छा तृष्णा अपरंपार, लोभ किया है अपार।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

10

राग पाप

(चाहत = Attachment)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश और आकर्षण के वश होकर राग–पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव राग (मान्यता के स्तर पर राग करना)

- मेरी आत्मा में रही वीतरागता ही सुखरूप है ऐसा नहीं माना और राग में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य राग (आचरण के स्तर पर राग करना)

- मनपसंद वस्तु का संग्रह करके पुनः पुनः स्मरण किया है ○
- मनपसंद व्यक्ति के साथ हुए लौकिक प्रसंगों के विचारों में खोए रहना ○
- मनपसंद परिस्थिति का लौकिक भाव से पुनः पुनः स्मरण किया है ○
- किसी वस्तु–परिस्थिति में चाहतपूर्ण रमणता के कारण धर्मसाधन से विमुख रहे हैं ○
- धर्म–अनुष्ठान में होते हुए भी रागवश मन चंचल हुआ है ○
- धर्म–अनुष्ठान में होते हुए भी रागवश वचन चंचल हुआ है ○
- धर्म–अनुष्ठान में होते हुए भी रागवश काया चंचल हुई है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना–क्रम में गहरे उतरते हैं–

- राग पाप की समझ ○
- राग पाप की स्मृति ○
- राग पाप की स्वीकृति ○
- राग पाप की आलोचना ○
- राग पाप का पश्चाताप ○
- राग पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव राग से द्रव्य राग तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या हर क्षण राग।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
मूल भूल है राग की, करता बारंबार।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

11

द्वेष पाप

(घृणा = Hatred)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश घृणा के आधीन होकर द्वेष पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव द्वेष (मान्यता के स्तर पर द्वेष करना)

- मेरी आत्मा में रही निर्दोषता ही सुखरूप है ऐसा नहीं माना और द्वेष में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य द्वेष (आचरण के स्तर पर द्वेष करना)

- नापसंद वस्तु का पुनः पुनः स्मरण करके घृणा की है ○
- नापसंद व्यक्ति के साथ हुए लौकिक प्रसंगों का पुनः पुनः स्मरण करके घृणा की है ○
- नापसंद परिस्थिति का लौकिक भाव से पुनः स्मरण करके घृणा की है ○
- किसी व्यक्ति–वस्तु–स्थिति के प्रति घृणा के कारण धर्म साधन से विमुख रहे ○
- धर्म अनुष्ठान में होते हुए भी द्वेष वश मन चंचल हुआ है ○
- धर्म अनुष्ठान में होते हुए भी द्वेष वश वचन चंचल हुआ है ○
- धर्म अनुष्ठान में होते हुए भी द्वेष वश काया चंचल हुई है ○
- द्वेष बुद्धि के कारण किसी से निरंतर प्रतिशोध (बदला) लेने की भावना की है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना–क्रम में गहरे उतरते हैं–

- द्वेष पाप की समझ ○
- द्वेष पाप की स्मृति ○
- द्वेष पाप की स्वीकृति ○
- द्वेष पाप की आलोचना ○
- द्वेष पाप का पश्चाताप ○
- द्वेष पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव द्वेष से द्रव्य द्वेष तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों.... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या हर क्षण द्वेष।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
मूल भूल के साथ में, द्वेष की बंधती गांठ।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

12

कलह पाप

(क्लेश = Quarrelling)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, स्वार्थवश व आक्रोश वश कलह पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव कलह (मान्यता के स्तर पर कलह करना)

- मेरी आत्मा की अनंत शांति ही पूर्ण सुखरूप है ऐसा नहीं माना और कलह के उथलेपन में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य कलह (आचरण के स्तर पर कलह करना)

- अपने भीतर घृणा का भाव होने से दूसरों के बीच झगड़ा करवाया है ○
- अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए दूसरों के बीच झगड़ा करवाया है ○
- कठोर व कर्कश शब्द बोलकर झगड़े की वृद्धि कराई है ○
- बिना बात जाने तरफदारी करके झगड़े को बढ़ाया है ○
- चलते हुए झगड़े को शांत कराने की कोशिश नहीं की ○
- अविवेक से बोलने के कारण दूसरों के बीच झगड़ा हुआ है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- कलह पाप की समझ ○
- कलह पाप की स्मृति ○
- कलह पाप की स्वीकृति ○
- कलह पाप की आलोचना ○
- कलह पाप का पश्चाताप ○
- कलह पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव कलह से द्रव्य कलह तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से- किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या कलह पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
स्वार्थ और आक्रोश से, किया कलह का पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

13

अभ्याख्यान पाप

(झूठा कलंक = False Accusation)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, स्वार्थवश, भयवश और पूर्वाग्रह के कारण अभ्याख्यान पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव अभ्याख्यान (मान्यता के स्तर पर अभ्याख्यान करना)

- मेरी आत्मा की अनंत निष्कलंकता ही पूर्ण सुखरूप है परंतु आरोप–प्रत्यारोप में सुख माना ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य अभ्याख्यान (आचरण के स्तर पर अभ्याख्यान करना)

- अपने भीतर घृणा का भाव होने से दूसरे पर झूठा इल्ज़ाम लगाया है ○
- अपने भीतर राग का भाव होने से दूसरे पर झूठा इल्ज़ाम लगाया है ○
- अपनी गलती छिपाने के लिए दूसरे पर झूठा इल्ज़ाम लगाया है ○
- अपने को अच्छा दिखाने के लिए दूसरे पर झूठा इल्ज़ाम लगाया है ○
- किसी की भूल देखे–समझे बिना उस पर झूठा इल्ज़ाम लगाया है ○

  इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- अभ्याख्यान पाप की समझ ○
- अभ्याख्यान पाप की स्मृति ○
- अभ्याख्यान पाप की स्वीकृति ○
- अभ्याख्यान पाप की आलोचना ○
- अभ्याख्यान पाप का पश्चाताप ○
- अभ्याख्यान पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव अभ्याख्यान से द्रव्य अभ्याख्यान तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से— किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या अभ्याख्यान।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
झूठा कलंक लगाते रहे, किया है अभ्याख्यान।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

14

पैशुन्य पाप

(चुगली करना = Gossip)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, घृणावश और अहंकार वश हो कर पैशुन्य पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव पैशुन्य (मान्यता के स्तर पर चुगली करना)

- मेरी आत्मा का मौन ही सुखपूर्ण है परंतु बोल–बोल कर, चुगली करने में सुख माना। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य पैशुन्य (आचरण के स्तर पर चुगली करना)

- किसी पर घृणा के कारण उसकी सच्ची–झूठी बात दूसरों को कह कर उसे नीचा दिखाया है ○
- अपना अहंकार बनाए रखने के लिए दूसरों की सच्ची–झूठी बात सब में फैलाई है ○
- बिना प्रयोजन के (just time pass) दूसरों की सच्ची–झूठी बात समाज में फैलाई है ○
- दूसरों के दोषों को बढ़ा–चढ़ा कर बताया है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- पैशुन्य पाप की समझ ○
- पैशुन्य पाप की स्मृति ○
- पैशुन्य पाप की स्वीकृति ○
- पैशुन्य पाप की आलोचना ○
- पैशुन्य पाप का पश्चाताप ○
- पैशुन्य पाप की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव पैशुन्य से द्रव्य पैशुन्य तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या पैशुन्य पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
अपनी घृणा और आदत से, करा है पैशुन्य पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

15

पर–परिवाद पाप

(निंदा करना = Criticism)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, स्वार्थ वश, ईर्ष्या वश और द्वेष वश हो कर पर–परिवाद पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव पर–परिवाद (मान्यता के स्तर पर निंदा)

- मेरी आत्मा की गुण–ग्राहकता ही अनंत सुखपूर्ण है परंतु मैंने दोष देखने में ही सुख माना है ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य पर–परिवाद (आचरण के स्तर पर निंदा)

- किसी व्यक्ति पर राग के कारण उसकी लाई वस्तु की प्रशंसा की है व दूसरों की लाई हुई वस्तु की निंदा की है ○
- एक परिस्थिति के राग के कारण दूसरी परिस्थिति की निंदा की है ○
- एक व्यक्ति के राग के कारण दूसरे व्यक्ति की निंदा की है ○
- ईर्ष्या के कारण किसी के लौकिक प्रसंग (विवाह आदि) की निंदा की है ○
- ईर्ष्या के कारण किसी के धार्मिक अनुष्ठान (दान–तप आदि) की निंदा की है ○
- ईर्ष्या के कारण किसी के रूप–रंग की निंदा की है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना–क्रम में गहरे उतरते हैं–

- पर–परिवाद पाप की समझ ○
- पर–परिवाद की स्मृति ○
- पर–परिवाद की स्वीकृति ○
- पर–परिवाद की आलोचना ○
- पर–परिवाद का पश्चाताप ○
- पर–परिवाद की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव निंदा से द्रव्य निंदा तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या पर परिवाद।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
राग-द्वेष का गठबंधन, पर-परिवाद कराए।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

16

रति-अरति पाप

(रुचि–अरुचि = Likes-Dislikes)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, झूठवश और लालच वश हो कर रति–अरति पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव रति-अरति (मान्यता के स्तर पर रुचि-अरुचि)

- मेरी आत्मा में अनंत गुण–राशि होने पर भी धर्म में दुःख और संसार में सुख है ऐसा माना है। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य रति-अरति (आचरण के स्तर पर रुचि-अरुचि)

- संसार कार्य में रुचि, उल्लास के साथ जुड़े हैं ○
- धर्म कार्य में अरुचि, अनुत्साह से जुड़े हैं ○
- संसार कार्य में मज़ा आता है, ऐसा निर्णय है ○
- धर्म कार्य बड़ा boring होता है, ऐसा निर्णय है ○
- संसार क्षेत्र में रूचि पूर्वक आरंभ–परिग्रह किया है ○
- धर्म क्षेत्र में अरुचिपूर्वक, लोभ पूर्वक प्रभावना, दान आदि किया है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना–क्रम में गहरे उतरते हैं–

- रति–अरति पाप की समझ ○
- रति–अरति की स्मृति ○
- रति–अरति की स्वीकृति ○
- रति–अरति की आलोचना ○
- रति–अरति का पश्चाताप ○
- रति–अरति की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव रति–अरति से द्रव्य रति–अरति तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या रति-अरति पाप।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
समझ बिना संसार-रति, धर्म-अरति में रहा।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

17

माया–मृषावाद पाप

(कपट पूर्वक झूठ = Malice)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, ईर्ष्या वश और द्वेष वश हो कर माया–मृषावाद पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव माया–मृषावाद (मान्यता के स्तर पर माया–मृषावाद)

- मेरा स्वरूप ही अनंत गुणों से भरा हुआ है– ऐसा बोला है; परंतु स्वयं को शरीर रूप ही माना है। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य माया–मृषावाद (आचरण के स्तर पर माया–मृषावाद)

- दूसरे को छोटा दिखाने के लिए कपट–पूर्वक झूठ बोला है ○
- दूसरे के प्रति ईर्ष्या के कारण कपट–पूर्वक झूठ बोला है ○
- दूसरे के प्रति द्वेष के कारण कपट–पूर्वक झूठ बोला है ○
- अपने स्वार्थ, लाभ के कारण कपट–पूर्वक झूठ बोला है ○
- व्यवसायिक कार्य (Payment, despatch etc.) में कपट–पूर्वक झूठ बोला है ○
- व्यवहारिक कार्य (शादी आदि) में कपट–पूर्वक झूठ ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- माया–मृषावाद पाप की समझ ○
- माया–मृषावाद की स्मृति ○
- माया–मृषावाद की स्वीकृति ○
- माया–मृषावाद की आलोचना ○
- माया–मृषावाद का पश्चाताप ○
- माया–मृषावाद की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव माया–मृषावाद से द्रव्य माया–मृषावाद तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या माया मृषावाद।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
कपट-चालाकी-झूठ से, किया है माया-मृषावाद।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

18

मिथ्या दर्शन शल्य (मिथ्यात्व) पाप

(विपरीत मान्यता = Wrong Belief)

हे प्रभु! मैंने अज्ञानवश, मोहवश और कुसंस्कारों के वश होकर मिथ्यात्व पाप का सेवन इस प्रकार से किया है–

भाव मिथ्यात्व (मान्यता के स्तर पर मिथ्यात्व)

- मेरा स्वरूप ही मात्र शुद्ध, बुद्ध, ज्ञाता–द्रष्टा रूप है परंतु स्वयं को अशुद्ध–अज्ञानी–कर्ता–भोक्ता माना है। ○

स्मरण रहे कि मान्यता की भूल के कारण ही आचरण की भूल होती है; इसलिए वही मूल–भूल है।

द्रव्य मिथ्यात्व (आचरण के स्तर पर मिथ्यात्व)

- देव–गुरू–धर्म का यथार्थ स्वरूप नहीं जाना है ○
- देव, गुरू, धर्म से सांसारिक मन्नत मांगी है ○
- सुदेव–सुगुरू–सुधर्म में शंका की है ○
- कुदेव–कुगुरू–कुधर्म में श्रद्धा की है ○
- सांसारिक कामना पूरी करने के लिए यंत्र–मंत्र–तंत्र का सहारा लिया है ○
- शुष्क ज्ञान से मोक्ष माना है ○
- जड़ क्रिया से मोक्ष माना है ○
- गुणों को देखे–समझे बिना पूज्य भाव स्थापित किया है ○
- शक्ति से सम्मोहित हो कर पूज्य भाव स्थापित किया है ○

इत्यादि...

हे भगवन्! आपकी साक्षी से आज के दिन हम क्षमापना-क्रम में गहरे उतरते हैं-

- मिथ्यात्व पाप की समझ ○
- मिथ्यात्व की स्मृति ○
- मिथ्यात्व की स्वीकृति ○
- मिथ्यात्व की आलोचना ○
- मिथ्यात्व का पश्चाताप ○
- मिथ्यात्व की क्षमापना ○ (प्रयोग विधि में प्रवेश)
- क्षमापना के पश्चात् संवेदन ○

(राहत, हल्कापन, आँसू, मैत्री, प्रमोद आदि एक या एक से अधिक गुणों का संवेदन)

अहो! वीतराग परमात्मन्! अनादिकाल के इस परिभ्रमण में भाव मिथ्यात्व से द्रव्य मिथ्यात्व तक के सभी पाप मैंने मन से, वचन से, काया से– किये हैं, करवाये हैं और करने वाले की प्रशंसा की है। ○

हे प्रभु! आज इस पाप का गहन रूप समझते हुए हृदय से आपसे याचना करते हैं कि अनादिकाल के वे सभी पाप निष्फल हों, निष्फल हों... ○

जो मैं जीव विराधिया, सेव्या मिथ्या-दर्शन।
नाथ आपकी साक्षी में, वारंवार धिक्कार।।१।।
देव-गुरू के भेद की, समझ न श्रद्धा होय।
नाथ आपकी साक्षी में, मिच्छामि दुक्कड़म् आज।।२।।

क्षमापना समापन

इस प्रकार हे परम कृपाणु जिनराज देव! अठारह प्रकार के पापस्थानक, अनादिकाल के इस परिभ्रमण में इस आत्मा ने किसी–न–किसी रूप में खुद किए हैं, दूसरों को करने की प्रेरणा की है और जो करते हैं उनकी अनुमोदना की है। इन समस्त पाप के प्रति जिन–आज्ञा के विधि–विधान को ध्यान में रखते हुए बारंबार मिच्छामि दुक्कड़म्! हे परमात्मा, मेरे वह सभी पाप मूल–सहित नाश हो– ऐसी ही वारंवार प्रार्थना! वारंवार प्रार्थना!!

इन अठारह प्रकार के पापस्थानक की आलोचना करते हुए अब हम समस्त जीवराशि के प्रति हुए इन पापों की क्षमायाचना करते हैं और उनको भी क्षमा दे कर जीवन मुक्त होने की ओर अग्रसर होते हैं।

खामेमि सव्व जीवा, सव्वे जीवा वि खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणई।।

खामेमि	मैं क्षमा करता हूँ
सव्व जीवा	सब जीवों को
सव्वे	सब
जीवा	जीव
खमंतु	क्षमा करें
मे	मुझे
मे	मेरी

मिती	मैत्री
सव्वभूएसु	सब जीवों के साथ
वेर	वैर
मज्झं	मेरा
न	नहीं
केणइ	किसी के साथ

मैं करता सबको क्षमा, करे मुझे सब कोय।
मैत्री मेरी सब जीवों से, बैरी नहीं है कोय।।

एवमहं आलोइय, णिंदिय गरिहिय दुगंछियं सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं।।

एवमहं	इस तरह मैं
आलोइय	आलोचना करके
णिंदिय	निंदा करके
गरहिय	गर्हा करके
दुगंछियं	अरुचि व्यक्त करके, जुगुप्सा करके
सम्मं	सम्यक् प्रकार से

तिविहेण	तीन प्रकार से, मन–वचन–काया के द्वारा
पडिक्कंतो	प्रतिक्रमण करता हुआ, सम्पूर्ण दोषों से निवृत्त होता हुआ
वंदामि	मैं वन्दन करता हूँ
जिणे	जिनों को
चउव्वीसं	चोबीसों

आलोचना निज पाप की, करता हूँ अब मैं। निंदा करते, घृणा करते, अरुचि पाप की होय।।
मन-वच-काया योग से, प्रतिक्रमण करूँ अब। चौबीस जिन भगवंत को, वंदन करलूं अब।।

<u>यहाँ लोगस्स का कायोत्सर्ग</u>

अक्षर पद हीन-अधिक, भूल चूक कहीं होय।
अरिहा सिद्ध निज साक्षी में, मिच्चछामि दुक्कड़म् मोय।।

।। इति आलोचना पाठ ।।

क्षमापना स्तुति

1. हे नाथ! भूला मैं, भवसागर में भटका,
नहि अधम काम करते, मैं कभी भी अटका।

2. तुम वचन अमुलख, लक्ष में नहि लिये,
नहीं तत्त्व विचार से, कहा तुम्हारा किये।

3. सेवे नहि उत्तम, शील प्रणीत तुम्हारे,
भूला वचन आपके, भव बढ़ाए अपने।

4. प्रभू! दया, शांति और क्षमा, आदि मैंने छोड़ी,
और पवित्रता की, पहचान भी ना थोड़ी।

5. मैं भूला, अटका और भटकता भारी,
इस संसार में विभू विड़ंबना हुई मेरी।

6. मैं पापी मदोन्मत्त, मलिन कर्म के रज से,
और तत्व मोक्ष का, मिला नहीं, प्रभू खुद से।

7. हे परमात्मा! मैं प्रपंच में ही पड़ा हूँ,
मैं मूढ़, निराश्रित, महा अनाथ बना हूँ।

8. बना अंध अमित, अज्ञान से भूला भक्ति,
नहीं निश्चय मुझमें, नाथ विवेक की शक्ति।

9. ओ राग रहित प्रभू! मुझको जानो अनाथ,
इस दीन दासका, ग्रहो प्रेम से हाथ।

10. मैं शरण अब तो, ग्रहण तुम्हारा कर लूँ,
तुम धर्म साथ तुम मुनि का शरण स्वीकारुँ।

11. मैं मांगता हूँ प्रभू, मुझ अपराध की माफ़ी,
कर देना पाप से मुक्त, कह चुका काफी।

12. यह अभिलाषा अविनाशी, पूरण करना,
मेरे दोष दयानिधि, देव दिल में ना धरना।

13. मैं पाप का पश्चाताप, प्रभू अब कर लूँ,
और सूक्ष्म विचार से, अपने अंदर उतरूँ।

14. तुम तत्त्व चमत्कृति, नज़रों में सदा रहते हैं,
जो मुझ स्वरूप का, विकास नाथ करते हैं।

15. हो आप नीरागी, अनंत और अविकारी,
और स्वरूप सत् चिदानंद अहो! सुखकारी।

16. हो सहजानंदी, अनंतदर्शी ज्ञानी,
त्रैलोक्य प्रकाशक, नाथ! क्या कहूँ मैं कहानी।

17. मेरे हित अर्थे दूं, साक्षी मात्र तुम्हारी,
मैं क्षमा चाहूँ, मति सदा देना मुझे न्यारी।

18. तुम प्रणीत किये तत्त्व में, शंकाशील ना होवूं,
जो आप बतावो, मार्ग, वहीं मैं जावूं।

19. मुझ आकांक्षा और वृत्ति ऐसी नित्य होवे,
जो ले चले आगे, बस, मुक्ति ही पावे।

20. हे सर्वज्ञ प्रभू! क्या विशेष कहूं तुमसे,
कुछ छुपा नहीं मैं भी ये जानूं तुमसे।

21. मैं केवल पश्चाताप, हृदय से कह दूं,
कर्म जनित पापों की, क्षमा अब चाहूँ।

22. शांति शांति, करो कृपाणु शांति,
गुरु राजचंद्र जिन वचन,
हरो मम (मुझ) भ्रांति।

For Spiritual Guidance, contact
BEN Sri Ratna PRABHU
benprabhu@shrimadrajchandradelhi.org

For any further information, contact
Gautam Kamdar
+91 958 222 0 555
gautam.admin@shrimadrajchandradelhi.org

Visit us at
www.shrimadrajchandradelhi.org

Shrimad Rajchandra Mission - The Kendra, Delhi

a Spiritual Revolutionary Movement - SRM

www.shrimadrajchandradelhi.org